शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

वर्तमान समय में मौर्यकालीन ग्रामीण शासन व्यवस्था की प्रासंगिकता

जयदीप कुमार (शोधार्थी)
एम.फिल्., नेट (इतिहास विभाग)
डॉ. धनपाल सिंह
(सहायक प्राध्यापक)
राजनीति विज्ञान विभाग
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय परिसर
मेरठ, उत्तरप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

वर्तमान समय में भारत के ग्रामीण समाज की जो दुर्दशा दिखाई देती है, उसे देखकर हमारा ध्यान मौर्यकाल में प्रचलित ग्रामीण शासन व्यवस्था पर जाता है, जिसके अन्तर्गत गाँवों को पूर्ण स्वायत्ता प्राप्त थी और वे ग्रामीण समाज का पूर्ण प्रबन्ध ग्रामीण संसाधनों के माध्यम से ही करते थे। आज के इस समय में गांवों में जो विकृतियाँ फैलती जा रही हैं, उन्हें देखकर यह अनुभव होता है कि हमारी ग्रामीण शासन व्यवस्था कितनी पंगु हो चुकी है। प्रस्तुत शोध पत्र में मौर्यकालीन शासन व्यवस्था को आज के संदर्भों में चर्चा की गयी है।

प्रस्तावना

कौटिल्य के अनुसार जनपद का निर्माण ऐसे ग्रामों से मिलकर होता था, जिनमें 100 से 500 तक कुल परिवार निवास करते हों। ग्राम का क्षेत्रफल एक कोस से दो कोस तक होता था।**1** प्रत्येक गांव शासन की दृष्टि से अपनी पृथक व स्वतंत्र सत्ता रखता था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से हमें इन ग्राम संस्थाओं की शासन व्यवस्था का पता चलता है। उस समय प्रत्येक ग्राम का शासक पृथक-पृथक होता था, जिसे ग्रामिक कहते थे। ग्रामिक ग्राम के अन्य निवासियों के साथ मिलकर गांव के शासन का प्रबन्ध करता था तथा दोषपूर्ण अपराधियों को दण्ड देता था और किसी व्यक्ति को गांव से बहिष्कृत भी कर सकता था।**2**

ग्राम सभायें विभिन्न समितियां बनाकर शासन करती थीं। ये समितियां थीं-

1.शासन कार्य का नियन्त्रण तथा निरीक्षण समिति
2.दानसमिति
3.जल-समिति
4.उद्यान-समिति
5.न्याय-समिति
6.कोष-समिति
7.विविध विभागों की निरीक्षण समिति
8.क्षेत्र-समिति
9.मन्दिर-समिति
10.आतिथ्य-समिति**3**

अपने कार्यों को सम्पादित करने के लिए ग्रामों के पास अपना सार्वजनिक कोष भी होता था, जो

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

जुर्माने ग्रामिक द्वारा अपराधियों से वसूले जाते थे वे इसी निधि में जमा होते थे।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में ग्राम्य व्यवस्था

कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र में ग्रामिक और ग्राम (ग्राम संख्या) के कार्य को स्पष्ट बताया गया है- ''जो कृषक गांव में खेती करने के लिए आए पर खेती न करे, उस पर जुर्माना किया जाए और यह जुर्माना 'ग्राम' प्राप्त करें। जिसने काम करने के लिए पेशगी वेतन (पारिश्रमिक) ले लिया हो, पर काम न किया हो उससे पेशगी ली हुई राशि का दुगना जुर्माने के रूप में वसूला जाए। यदि ऐसा व्यक्ति किसी 'प्रवहण' में सम्मिलित हुआ हो और वहाँ उसने भोजन, पेय आदि प्राप्त किया हो, पर उसके बदले में वांछित कार्यों का सम्पादन न किया हो, तो भोजन एवं पेय के मूल्य का उससे दुगना वसूल किया जाए।''**4** ग्राम की ओर से ही सार्वजनिक हित के अनेक कार्यों की व्यवस्था की जाती थी। इस ग्राम संस्था के माध्यम से ग्रामीण लोगों के मनोरंजन के लिए विविध तमाशों की व्यवस्था की जाती थी, जिनमें सब ग्रामवासियों को हिस्सा बांटना होता था।**5** जो लोग अपने सार्वजनिक कर्त्तव्य की उपेक्षा करते थे, उन पर जुर्माना किया जाता था।**6** देश (जनपद) में विविध मार्गों को बनाने, बांध बांधने आदि के कार्य भी ग्रामों द्वारा किये जाते थे।**7** इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्राम का अपना एक पृथक संगठन भी उस युग में विद्यमान था। यह ग्राम संस्था न्याय का कार्य भी करती थी। ग्राम सभाओं में बनाये गये नियम साम्राज्य के उच्च न्यायालयों में भी मान्य होते थे। अक्ष पटल के अध्यक्ष के कार्यों में एक यह भी था कि वह ग्राम संघ के धर्म, व्यवहार, चरित्र, संस्थान आदि को निबन्ध पुस्तकस्थ (रजिस्टर्ड) करें।**8**

कौटिल्य अर्थशास्त्र के अध्ययन से इस बात में कोई सन्देह नहीं रह जाता है कि मौर्य साम्राज्य के ग्रामों में स्वायत्त संस्थाओं की सत्ता थी। इस ग्राम संघ के सदस्यों को ग्रामवृद्ध कहा जाता था।**9** सम्भवतः ग्राम में निवास करने वाले सब कुलो या परिवारों के मुखियाओं (वृद्धों) द्वारा ही ग्राम संघ का निर्माण होता था। ये ग्रामवृद्ध जहां अपराधियों को दण्ड देते थे, उनसे जुर्माने वसूल करते थे, ग्राम विषयक सार्वजनिक हित के कार्यों का सम्पादन करते थे और लोगों के मनोरंजन की व्यवस्था करते थे। वहां ग्राम की शोभा को कायम रखना**10** और नाबालिगों की सम्पत्ति का इन्तजाम करने का भी कार्य करते थे। ग्राम में विद्यमान मन्दिरों और अन्य देव स्थानों की सम्पत्ति का प्रबन्ध भी इन्हीं के हाथों में था।**11**

ग्रमिक के कार्य

ग्राम संघ या ग्राम संस्था का मुखिया जहां ग्रमिक कहलाता था, वहां केन्द्र सरकार की ओर से भी ग्राम के शासन के लिए एक कर्मचारी नियत किया जाता था। जिसे 'गोप' कहते थे।**12** ग्राम के शासन में गोप की वही स्थिति होती थी जो नगर के शासन में नागरिक की थी। केन्द्रीय सरकार की ओर से गोप के प्रमुख कार्य थे-

1.ग्रामों की सीमाओं को निर्धारित करना, जनगणना कराना और भूमि का विभाग करना।

2.भूमि के क्रय-विक्रय का उल्लेख करना।

3.कौन सी भूमि टैक्स मुक्त है और किससे कितना-कितना कर लिया जाता है, इसका उल्लेख करना।

4.ग्राम में चारों वर्णों के कितने-कितने मनुष्य निवास करते हैं उनमें से कितने कृषक, कितने ग्वाले, कितने व्यापारी (वैदेहक), कितने कारू (कारीगर), कितने कर्मकार (मजदूर) और कितने दास है इसका रिकार्ड रखना।

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

5.ग्राम में दो पाँव वाले जन्तुओं की कितनी-कितनी संख्या है इसका हिसाब रखना।

6.ग्राम के प्रत्येक गृह से कितना स्वर्ण, कितनी विष्टि (बेगार) कितना शुल्क और कितना दण्ड (जुरमाना) प्राप्त हुआ इसका हिसाब रखना।

7.ग्राम के अन्तर्गत प्रत्येक कुल में कितने पुरूष है और कितनी स्त्रियाँ उनमें कितने वृद्ध है और कितने बालक, वे क्या करते हैं, उनके क्या पेशे हैं, उनका चरित्र कैसा है, उनकी कितनी आय है और वे कितना व्यय करते हैं, इन सब बातों का रिकार्ड रखना।

8.प्रत्येक ग्राम के क्षेत्र के अन्तर्गत भूमि का हिसाब रखना कि उसमें कितनी भूमि पर जुते हुए खेत है, कितनी भूमि पर बिना जुते खेत है, कितनी भूमि परती पड़ी हुई है, कितनी भूमि केदार (खादर) है, कितनी पर आराम (बाग) है, कितनी पर षण्ड (सब्जी) के खेत है, कितनी पर चैत्य और देवग्रह है, कितनी पर तालाब है, कितनी पर श्मशान है, कितनी सत्र (लंगर) के प्रयोग में आ रही है, कितनी प्रपा (प्याऊ) के लिए है और कितनी भूमि पर पुण्यस्थान, चरागाह और रास्ते है।

9.भूमि के दान और सम्प्रदान को उल्लेखित करना।**13**

निस्सन्देह गोप एक अत्यन्त महत्वपूर्ण राजकर्मचारी था जिसका कार्य अपने क्षेत्र के अन्तर्गत ग्रामों के सम्बंध में सभी आवश्यक बातों का पूरा-पूरा रिकार्ड रखना होता था। ग्रामों से अधिक बडे क्षेत्र में ये ही कार्य स्थानिक नामक कर्मचारी केन्द्रीय सरकार द्वारा इस प्रयोजन से नियुक्त किया जाता था**14**, कि अपने अधीन गोपों से इन सब कार्यों को सुचारू रूप से सम्पादित कराएं। स्थानिक से ऊपर समाहर्ता पूरे जनपद के लिए इन्हीं कार्यों को सम्पन्न कराता था। यद्यपि ग्रामों एवं जनपदों में स्थानीय स्वायत्त शासन की सत्ता थी और उनके ग्राम संघ और जनपद संघ भी विद्यमान थे।

मौर्य युग में जनपद केन्द्रीय सरकार के अधीन हो गये थे अतः पाटलिपुत्र की केन्द्रीय सरकार के लिए यह आवश्यक था कि उसके द्वारा इनके सुशासन के लिए और इनके विषय में पूरी-पूरी और सही-सही जानकारी प्राप्त करने के लिए राजकर्मचारी नियुक्त किए जाते थे। स्थानिक और गोप इसी ढ़ंग के कर्मचारी थे।**15**

इन्हीं राजकर्मचारियों की कार्यक्षेत्र में पारदर्शिता के फलस्वरूप ही केंद्रीय सरकार ग्रामों एवं जनपदों के लिए लोक कल्याणकारी योजनाएं बनाती थी जिससे साम्राज्य में व्यवस्था एवं खुशहाली आ सके।

गोप के द्वारा लिखे गये ये रिकार्ड राज्य और ग्रामों के लिए कल्याणकारी योजनाएं बनाने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त गोप के नियंत्रण के रहते हुए भी ग्रामीण और ग्राम संघ का ग्राम के शासन में बहुत महत्वपूर्ण था।**16**

ग्रामों का विभाजन

आचार्य कौटिल्य ने ग्रामों को भी अनेक वर्गों में विभक्त किया। जनसंख्या के आधार पर ग्रामों के तीन वर्ग थे, ज्येष्ठ (बड़े), मध्यम और कनिष्ट (छोटे)। एक ग्राम में 100 से लेकर 500 तक की संख्या में कुलों (परिवारो) का निवास होता था। पांच सौ के लगभग कुलों वाले ग्राम ज्येष्ठ थे, एक सौ के लगभग कुलों वाले कनिष्ठ थे और इनके बीच के गांव मध्यम वर्ग के थे। इन तीनों प्रकार के ग्रामों को राजकीय कर की दृष्टि से अनेक भागों में विभक्त किया गया था। ये विभाग प्रमुखता थे**17**-

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

1.ग्रामाग्र - ये साधारण ग्राम थे, जिनसे राजकीय कर वसूल किया जाता था।

2.परिहारक- इस वर्ग के ग्रामों से कोई राजकीय कर नहीं लिया जाता था। सम्भवतः ये ग्राम ऋत्विक, आचार्य, पुरोहित और श्रोत्रिय आदि को 'ब्रह्मदेय' के रूप में राज्य द्वारा प्रदान किए जाते थे। न इनसे कोई कर लिया जाता था और न अनाज आदि। ऋत्विक आदि इनसे इतनी आमदनी प्राप्त कर लेते थे जिससे वे अपना निर्वाह भलीभांति कर सकें। इसी प्रकार विविध अध्यक्षों (राजकीय विभागों के अध्यक्षों), संख्याओं, गोपों, स्थानिकों, अनीकस्थो (पशु-चिकित्सकों), चिकित्सको, अश्वदमको (घोड़ो को प्रशिक्षित करने वाला) और जघांरिको (पशुपालको) को भी ऐसी भूमि एवं प्रदान कर दिये जाते थे, जिन पर उन्हें कोई पर नहीं देना पड़ता था। राज्य की ओर से मिले इन ग्रामों व जायदाद को ये न बेच सकते थे और न ही गिरवी रख सकते थे।18 ये केवल इन ग्रामों एव जायदादों की आमदनी का उपभोग ही कर सकते थे। ऐसे ग्रामों को 'परिहारक' कहा जाता था।

3.आयुधीध- ऐसे ग्राम जिनसे राजकीय कर न लिया जाता हो, पर जिनसे राज्य को सैनिक प्राप्त होते हों। बहुत से ग्राम ऐसे भी होते थे जो सेना के लिए सैनिक प्रदान करते थे और इसी कारण वे राजकीय कर से मुक्त थे।

मौर्यकाल में ऐसे ग्राम जो राजकीय कर नकद प्रदान न कर उसे धान्य (अनाज) पशु, हिरण्य, कुप्य (कच्चामाल) या विष्टि (बेगार) के रूप में प्रदान करते थे। दुर्गों और राजकीय भवनों के निर्माण के लिए जिन शिल्पियों और मजदूरों की आवश्यकता होती थी, अनेक ग्राम इन्हें प्रदान कर दिये जाते थे। क्योंकि इनके ग्रामों को राजकीय कर से छूट प्राप्त होती थी, अतः राज्य का कार्य करने पर इन्हें कोई पारिश्रमिक नही दिया जाता था।

स्वशासन

मौर्यों ने जिस विशाल साम्राज्य की स्थापना की थी, उसमें यह संभव नही था कि सम्पूर्ण साम्राज्य में किन्हीं ऐसी प्रतिनिधि-संस्थाओं की सत्ता हो जिनके सदस्य जनता द्वारा निर्वाचित होते थे क्योंकि उस समय में यातायात के साधन समुन्नत नही थे पर संचार और यातायात के द्रुतगामी साधनों के अभाव में भी ग्रामों, नगरों और जनपदों में ऐसी स्वशासन संस्थाएं इस काल में विद्यमान थी जिनके द्वारा जनता को अपना शासन स्वयं करने का अवसर प्राप्त होता था। लेकिन वर्तमान समय में समुन्नत यातायात और संचार साधनों, जनजागृति एवं शिक्षा व्यवस्था के फलस्वरूप हम अपनी स्थानीय शासन व्यवस्था को सही ढंग से संचालित करने में अपने आप को असमर्थ पाते हैं। अतः आवश्यक यह है कि हम अपनी स्थानीय संस्थाओं को फिर से अपने शासन के भारतीय माडल पर खड़ा करें न कि यूरोपीय माडल पर क्योंकि शासन के सन्दर्भ में भारतीय और यूरोपीय दृष्टिकोण पूर्णतः भिन्न है। अतः हम अपने पुरातन स्थानीय स्वशासन के सिद्धान्तों को पुनः जीवित कर उन्हें व्यवहार में लाने का प्रयास करें जिससे कि अधिक से अधिक जन-कल्याण हो सके।

ग्रामों के स्वरूप और शासन के सम्बंध में जो अनेक निर्देश कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र में विद्यमान है, वे अत्यन्त महत्व के है। ग्रामों में जहां पुरानी परम्प्रागत स्वायत्त शासन संस्थाओं की सत्ता थी जिन्हें शासन के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त थे, वहां केन्द्रीय सरकार की ओर से भी उनमें कर्मचारी नियुक्त थे। कौटिल्य इस तथ्य से भलीभांति परिचित थे कि

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

गोप व स्थानिक सदृश कर्मचारी ही राजकीय करों को वसूल करते हैं और वे ही उन बातों के रिकार्ड भी रखते हैं, जिन पर राज्य की सुरक्षा, शान्ति और व्यवस्था निर्भर है। यदि ये कर्मचारी अपने कार्य में लापरवाही करें और ग्रामवासियों के विषय में सही सूचनाएं केन्द्रीय सरकार को न दें तो राज्य शासन कभी भी सुचारू रूप से नहीं चल सकता।**19** अतः चाणक्य ने यह व्यवस्था की थी कि समाहर्ता के वेश में ऐसे गुप्तचर ग्रामों में नियुक्त करें, जो गोपो और स्थानिको के रिकार्डो की सत्यता व प्रमाणिकता का निश्चय करने में तत्पर रहें। गोपों और स्थानिकों ने खेतों, गृहों और कुलों के विषय में, ग्रामों के मनुष्यों और पशुओं की संख्या के बारे में, लोगो की आय और व्यय के सम्बंध में और उनके चरित्र के विषय में जो सूचनाएँ रिकार्ड की हो, उनकी सत्यता की जांच करना इन गुप्तचरों का कार्य था।**20**

निष्कर्ष

अतः इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मौर्य युग में ग्रगामों का शासन अत्यन्त व्यवस्थित था जिसके फलस्वरूप गांवों का जीवन समृद्ध एवं सुख शान्तिपूर्ण था।

भारत की इन्हीं संस्थाओं के कारण यहाँ के निवासियों की वास्तविक स्वतंत्रता सदा सुरक्षित रही है। हमारे देश की सर्वसाधारण जनता का बड़ा भाग सदा से ग्रामों में बसता रहा है। आज हमें फिर से मौर्यकाल की ग्रामीण शासन व्यवस्था से सबक लेते हुए फिर से अपने ग्राम प्रशासन को पूर्ण स्वायत्ता प्रदान करनी होगी जिससे ग्रामीण समाज अपने-अपने गांव का शासन प्रबन्ध स्वयं कर सके। अगर हम ऐसा कर सकें तो हमारे समाज में शासन की एक ऐसी पद्धति की नींव पड़ सकती है जो भारतीय शासन और राजनीति पर दूरगामी प्रभाव डालने वाली होगी क्योंकि अगर गांव का शासन सुधर जाता है तो हमारी केन्द्रीय सरकार के अल्प सहयोग से भी हम राजनीतिक रूप से सक्षम हो सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1.ग्राम को शद्धिक्रोश सीमानमन्योन्यारक्षं निवेशयेत्। कौटिल्य- अर्थशास्त्र 2/1

2."ग्रामार्थेन ग्रामिक व्रजन्त उपवासाः पर्यायेणानुगच्धेयुरनुगच्धन्तः पणार्थ पणिक योजन दुद्यः।

ग्रामिकस्य ग्रामादस्तेनपारदार निरस्यतश्चतुविंशतिपणो दण्डः।" कौ० अर्थ 3/2

3.डॉ.कृष्ण कुमार, प्राचीन भारत की प्रशासनिक एवं राजनीतिक संस्थाएं, श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, 1998, पृष्ठ 227।

4.कर्षकस्य ग्राममभ्युपेत्याकुर्वतो ग्राम एवात्यमं हरेत्। कमकिरणे कर्मवेतनहियुवं रिष्यदानं प्रत्यंश द्विगुणंभक्ष्यपेयदाने च प्रवहषेषु द्विगुणमंश दद्यातु। कौ. अर्थ. 3/10।

5."प्रेक्षायामनंशदः स्वस्वजनो न प्रेक्षेत। प्रच्छन्नश्रवणेक्षणे च सर्वहिते च कर्माणि निग्रहेण द्विगुणमशं दद्यात्।' कौ०अर्थ० 3/10

6.सर्व हितमेकस्य ब्रुवता कुर्युशत्रुाम्। अकरणे द्वादशपणो दण्डः।

7.राजा देशहितान् से तन कुर्वतां पचि संडकमात्।

ग्राम शोभारच रक्षारचे तेषां प्रियहितं चरेत्।। कौ.अर्थ. 3/10

8.देश ग्रामजातिकुलसंघाताना धर्म व्यवहार चरित्र संस्थान... निबन्धपुस्तकस्थं कारयेत। कौ०अर्थ० 2/7

9.कौ.अर्थ. 211

10.कौ.अर्थ. 3/10

11.बालद्दव्यं ग्रामवृद्धा वर्धयेयुराव्यवहार प्रापणात्।

देवद्रव्य च।" कौ०अर्थ० 2/1

12.सत्यकेतु विद्यालंकार, प्राचीनभारत की शासन पद्धति और राजशास्त्र, श्री सरस्वती सदन नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ संख्या- 185

13.कौटिल्य अर्थशास्त्र, 2/35।

ISSN 2320 – 0871
17 जून 2015

14.एवं च जनपद चतुर्थ भागं स्थानिक: चिन्तयेत्। कौ. अर्थ 2/35

15.सत्यकेतु विद्यालंकार, मौर्य साम्राज्य का इतिहास, पृ.सं. 233, उपरोक्त

16.समाहर्ता चतुर्धा जनपदं विभज्य ज्येष्ठ मध्यम कनिष्ठ विभागेन ग्रामाग्रं परिहारक मायुधीयं धान्यपशु हिरण्यविष्टिप्रतिकार मिदेतोवदिति निब-धयेत्। कौ.अर्थ 2/35

17.ऋत्विगाचार्य पुरोहितश्रोत्रियेभ्यो ब्रह्मदेयान्यदण्डकराण्याभिस्पदायकानि प्रयच्छेत्। अध्यक्षसंख्यायकादिभ्यो गोपस्थानिकानीकस्थयिकित्साकाश्वदम जंघारिकेभ्यश्च विक्रयाधानवज्र्जम्।' कौ.अर्थ. 2/1

18.सत्यकेतु विद्यालंकार, प्राचीनभारत की शासन पद्धति और राजशास्त्र, श्री सरस्वती सदन नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ संख्या- 185

19.सत्यकेतु विद्यालंकार, मौर्य साम्राज्य का इतिहास, श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, 2010, पृ.सं.-233।

20.'समाहत् प्रदिष्टाश्च गृहपतिक व्य४जना येषु ग्रामेषु प्रणिहितास्तेषा ग्रामाणां क्षेत्रगृहकुलाग्रं विदयुः। मानसजाताभ्यां क्षेत्राणि भोगपरिहाराभ्यां गृहाणि वर्णकर्मभ्या कुलानि च। तेषा जंघाग्रमायव्यचै च विदयुः।' कौ० अर्थ० 2/35